Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

वज्रयान और सहजयान – सातवीं और आठवीं शताब्दी तदुपरान्त

डॉ0 अभिजात ओझा
असिस्टेंट प्रोफेसर,
प्राचीन इतिहास एवं पुरातत्व विभाग,
नेहरु ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत।

सारांश – इन्द्रभूति के समय से पूर्व ही अनेक बौद्ध तंत्रों की रचना हो चुकी थी। हेवज्रतंत्र, हेरुक, चण्डमहारोषण, वज्रवाराही, क्रियासमुच्चय, वज्रावली, योगिनीजाल आदि अनेक तंत्रों की अप्रकाशित पाण्डुलिपियाँ संस्कृत में शेष हैं। साधनमाला की प्राचीनतम पाण्डुलिपियाँ 1167 ई0 की हैं।

मुख्य शब्द – वज्रयान, सहजयान, सातवीं, आठवीं, शताब्दी, धर्मकीर्ति, वंश।

तारानाथ के अनुसार आचार्य असंग से धर्मकीर्ति के समय तक तंत्र की परम्परा गुप्त रही, किंतु इसके अनन्तर उसका प्रकाश हुआ तथा पालसम्राटों के समय में अनेकानेक मंत्राचार्य और वज्राचार्य हुए। इस समय चंद्रवंश के एक सिद्ध राजा का अविर्भाव हुआ। 84 सिद्धों में से अधिकांश धर्मकीर्ति और राजा चणक के अन्तराल में प्रकट हुए। पालयुग में महायान तथा मंत्रयान का मगध, मंगल (वंग), ओडिविश, अपरांत तथा कश्मीर में विस्तार हुआ।[1] पालयुग बौद्ध वज्राचार्यों एवं सिद्धाचार्यों का युग था। इनमें नाम बाहुल्य और नाम साम्य के कारण काल–निर्णय अत्यन्त दुष्कर एवं विवादास्पद है। तारानाथ ने आचार्य कम्बलपाद, कुकुराचार्य, सरोरुह वज्र, ललितवज्र तथा इन्द्रभूति को समकालीन बताया है।[2]

इन्द्रभूति तिब्बत में आठवीं शताब्दी में लामा–धर्म के प्रवर्तक पद्मसम्भव के पिता कहे गये हैं। इनकी छोटी बहन लक्ष्मींकरा भी सिद्ध थी तथा उसे सहजयान का प्रवर्तक कहा गया है। साधनमाला में इन्द्रभूति को कुरुकुल्लासाधन का आविष्कारक बताया गया है। इन्द्रभूति के ज्ञानसिद्धि आदि अनेक ग्रंथ

विदित हैं। ज्ञानसिद्धि से उसके पूर्ववर्ती विस्तृत तंत्र साहित्य का परिचय मिलता है। यह स्मरणीय है कि सम्भवतः इन्द्रभूति नाम के भी एकाधिक व्यक्ति थे।

अनंगवज्र का दार्शनिक मत मैत्रेयनाथ के मध्यांतविभंग का स्मरण दिलाता है।[3] संसार मिथ्या कल्पना की प्रसूति है। न इसके अस्तित्व को मानना चाहिए, न नास्तित्व को। शून्यता ही प्रज्ञातत्व है। करुणा को ही राग अथवा उपाय कहा जाता है। शून्यता और करुणा का नीर–क्षीर के समान मेल प्रज्ञोपाय कहलाता है। यही धर्मतत्त्व है जिसमें न कुछ जोड़ा जा सकता है, न घटाया। न उसमें ग्राह्य है, न ग्राहक, न सत् है, न असत्। यह प्रकृति–निर्मल, द्वैताद्वैतविवर्जित, शांत, शिव और प्रत्यात्मवेद्य है। यह प्रज्ञोपाय ही सब बुद्धों का आलय, दिव्य धर्मधातु एवं अप्रतिष्ठित निर्वाण है। तीनों काय, तीनों यान, असंख्य मंत्र, मुद्रा, मण्डल, चक्र, कुल तथा अशेष जीव सब वहीं से विनिर्गत हैं। प्रज्ञोपाय ही समस्त जगत के लिए चिंतामणि के समान भुक्ति और मुक्ति का पद है। वहीं पहुँच कर बुद्धत्व की प्राप्ति होती है।

इन्द्रभूति का कहना है कि अनुत्तर वज्रयान योगतंत्रों में प्रोक्त है।[4] यह स्मरणीय है कि बौद्ध तंत्र चतुर्विध है– क्रियातंत्र, चर्यातंत्र, योगतंत्र, अनुत्तरयोगतंत्र। वज्रसत्त्व सब जीवों के मन में व्याप्त है। वज्रयानी को निर्विकल्प, निरहंकार और निष्शंक होना चाहिए। प्रज्ञोपाय के समायोग से पाप–पुण्य का भेद विगलित हो जाता है। भक्ष्याभक्ष्य, पेयापेय, गम्यागम्य आदि का विवेक छोड़ देना चाहिए तथा सब धर्मो को प्रतीत्यसमुत्पन्न, निरात्मक एवं मायोपम समझना चाहिए। हिंसा, चोरी, व्यभिचार, मृषावाद आदि कर्मो से नरक प्राप्त होता है, किंतु योगी उन्हीं से मुक्त हो जाता है। सर्वव्यापी, सर्वज्ञ, लोकेश्वर, वज्रधर ही सब मंत्रों में वर्णित है। गुरूकृपा से ही इस उत्तम तत्त्व की प्राप्ति संभव है। गुरू ही त्रिरत्न है। आकाशवत् अलक्षण वज्रज्ञान ही समंतभद्र, महामुद्रा, धर्मकाय एवं आदर्शज्ञान है। रूप, शब्द आदि विषयों के उपयोग में वज्रयानी को बुद्ध पूजा की भावना करनी चाहिए। निर्विकल्प भाव से कामानुकूल कर्म करते हुए वज्रतत्व की प्राप्ति होती है।

कृपाप्रेरित योगी के लिए चित्तसाधन में गम्यागम्य विचार तिरस्कार्य है क्योंकि अनादि संसार में कोई भी संबंध नित्य अथवा अपरिवर्तनीय नहीं है। शुचि अशुचि का भेद भी अपेक्षिक और अलौकिक कल्पना है।

यह विचार्य है इन्द्रभूति ने उत्तम अधिकारी अथवा महायोगी के लिए तंत्र की विविध क्रियाओं को अनुपयोगी कहा है। यही नहीं परमार्थ को नित्य, सिद्ध और सर्वथा अपरिच्छन्न कहकर उन्होंने 'साधन' को भी भ्रान्तिमूलक सूचित किया है। गुरुकृपा एवं बोधि चित्त ही वास्तविक उपाय है और वे परस्पर तथा परमार्थ से अभिन्न हैं। इस प्रकार के वज्रयान में सहजयान का उन्मेष देखा जा सकता है।

'सहजयान' में किसी प्रकार के तप, नियम, स्नान, उपवास, प्रतिमार्चन आदि को उपयोगी नहीं माना जाता। काय में सब देवताओं का निवास तथा काय को ही आद्य और अन्त्य साधन स्वीकार किया जाता है। सहजसिद्ध के लिए किसी प्रकार का विधि निषेध भी मान्य न था। सहजयान की अभिव्यक्ति अनेकों सिद्धों की वाणी में मिलती है। परवर्ती शैव और वैष्णव मतों पर भी सहजयानी प्रभाव देखा जा सकता है। सहजयान के मूल का चिंतन करते हुए मैत्रेयनाथ की 'स्वाभाविककाय' स्मरणीय है। सब प्रतीत्यसमुत्पन्न धर्म कृत्रिम होने के कारण मिथ्या हैं। अकृत्रिम या सहज सत्य नित्यसिद्ध ही हो सकता है। इसके लिए सभी साधन अनुपयोगी हैं, किन्तु कितना ही शुद्ध ज्ञान मार्ग हो साधन का स्वीकार अनिवार्य है। 'जेन' सम्प्रदाय तक में साधन का स्थान है। इसी प्रकार सहजभाव में भी कायाश्रित साधन स्वीकृत है। इसका 'हठयोग' से निकट संबंध है। सहजयान की रहस्यात्मक एवं गीतात्मक अभिव्यक्ति सिद्धों की वाणी में प्राप्त होती है।[5] सरहपाद, शबरपाद, लुईपाद आदि के गीतों और दोहों के द्वारा प्रसिद्ध बौद्ध विद्यापीठों में मीमांसित अनेक निगूढ दार्शनिक सिद्धांत साधारण जनता तक सुलभ रूप में पहुँचे। तिब्बती ग्रंथों से इनके विषय में विवरण प्राप्त होता है। किन्तु यह किंवदंती प्रधान है।[6] सरह, अथवा लुईपा को सिद्ध परम्परा का प्रवर्तक कहा गया है। इन्द्रभूति के समय से पूर्व ही अनेक बौद्ध तंत्रों की रचना हो चुकी थी। हेवज्रतंत्र, हेरुक, चण्डमहारोषण, वज्रवाराही, क्रियासमुच्चय, वज्रावली, योगिनीजाल आदि अनेक तंत्रों की अप्रकाशित पाण्डुलिपियाँ संस्कृत में शेष हैं। साधनमाला की प्राचीनतम पाण्डुलिपियाँ 1167 ई0 की हैं।

संदर्भ :

1. तारानाथ, (अनु0 शीफनर), पृ0 201–202
2. वही, पृ0 188
3. प्रज्ञोपायविनिश्चियसिद्धि (''टू–वज्रयान वर्क्स'' में सम्पादित) प्रथम परिच्छेद
4. ज्ञानसिद्धि, (''टू वज्रयान वर्क्स'' में सम्पादित)
5. द्रश्टव्य, हरप्रसाद षास्त्री, बौद्धगान औ दोहा, पी0सी0 बागची, दोहाकोष
6. दत्त, भूपेन्द्रनाथ, मिस्टिक टेल्स ऑव लामा तारानाथ